Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 11, Issue 2 | November 2023 - April 2024 | pp. 140-144

समान नागरिक संहिता का विश्लेषणात्मक पक्ष

डॉ. मनोज कुमार भारी

सह आचार्य, राजनीति विज्ञान
आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा राजस्थान, जयपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

यह अध्ययन समान नागरिक संहिता के अर्थ को व्यापक रूप से परिभाषित करते हुए इसके संक्षिप्त विकास क्रम तथा वर्तमान में उपादेयता का विश्लेषण करने के लिए विद्वतापूर्ण कार्यों, पुस्तकों और पत्रों पर प्रकाश डालता है। विधिशास्त्र एवं समाजशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में पूर्व में ही बहुसांस्कृतिक भारत में विधियों की बहुलता तथा विधिक-बहुलवाद की स्वीकारोक्ति, विश्व पटल पर विधिक एकलवाद की बजाय 'राज्य की पहुंच से परे मानक आदेशों को स्वीकार किये जाने के कारण' इसकी आवश्यकता को चुनौती देती है, साथ ही लैंगिक न्याय के हितधारकों का इसमें रुचि प्रदर्शित न करना एवं सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी वर्तमान में पर्सनल लॉज़ को ख़ारिज न करके प्रकरण दर प्रकरण लेकर निर्णय देना भी समान नागरिक संहिता को लागू करने की कवायद को कमजोर करता है। 18वें विधि आयोग ने भी इसे 'न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय' माना है तथा आयोग द्वारा ही विधियों की भिन्नता के अस्तित्व को भेद के रूप में नहीं बल्कि एक मजबूत लोकतंत्र के रूप में देखे जाने के तर्क भी इसकी आवश्यकता को चुनौती देते हैं। 20 विधि आयोगों के 262 प्रतिवेदनों में सीसीसी से सम्बन्धित प्रतिवेदनों का संक्षिप्त उल्लेख शोध पत्र में किया गया है। निष्कर्षतः लेखक के अनुसार एक समायोजित सिविल विधिक नियमावली का संहिताकरण महिला समानता, सामाजिक समन्वय, और राष्ट्रीय एकीकरण को पुष्ट कर सकता है, यद्यपि भारत को धार्मिक और सांस्कृतिक विविधताओं तथा इससे जनित संवेदनशीलता की चुनौतियों से निपटना होगा।

संकेताक्षर—*बहुसांस्कृतिक, कानूनी बहुलतावाद, मानकात्मक आदेश, समायोजित सिविल कोड*

प्रस्तावना

समान नागरिक संहिता या यूनिफार्म/कॉमन सिविल कोड एक कानूनी ढांचा है जिसका उद्देश्य धर्म या समुदाय की परवाह किए बिना नागरिक मामलों से संबंधित व्यक्तिगत कानूनों में एकरूपता लाना है। भारत में विधि आयोग द्वारा यूसीसी/सीसीसी को लेकर सुझाव मांगे जाने के उपरांत मीडिया, अकादमिक वर्ग सहित सभी प्रमुख विचार प्रस्थापना केन्द्रों पर विमर्श जारी है। वस्तुतः कानूनी संदर्भ में, यूनिफार्म शब्द एक ऐसी प्रणाली या कानून को संदर्भित करता है जो विभिन्न क्षेत्रों या न्यायालयों में सुसंगत और मानकीकृत है। यूनिफार्म शब्द से तात्पर्य "एक-रूप, चरित्र/प्रकार का; हमेशा एक ही रूप में होना/ बनाए रखना, जो अलग-अलग जगहों पर एक जैसा है या रहता है[1]" है; वहीं सिविल शब्द का अर्थ है—"नागरिक कानून से संबंधित"[2]। सिविल या नागरिक कानून आपराधिक कानून से अलग है, जो राज्य के खिलाफ अपराधों से संबंधित है। यह उन मामलों को संदर्भित करता है, जो व्यक्तियों या संस्थाओं के बीच निजी अधिकारों और संबंधों को नियंत्रित करते हैं; नागरिक कानून में अनुबंध, संपत्ति, पारिवारिक कानून, अपकृत्य जैसे क्षेत्र शामिल हैं। यह किसी ऐसी चीज़ का भी संकेत दे सकता है जो सैन्य या धार्मिक पहलुओं से संबंधित नहीं है, उदाहरण के लिए, एक नागरिक सरकार एक गैर-सैन्य या गैर-धार्मिक शासी निकाय है, जो किसी देश के कानूनों और विनियमों का प्रबंधन करती है।

कानूनी संदर्भ में, "कोड" कानून के एक विशिष्ट क्षेत्र या किसी विशेष क्षेत्राधिकार को नियंत्रित करने वाले 'कानूनों या विनियमों के व्यापक और व्यवस्थित संग्रह'[3] को संदर्भित करता है। उदाहरण के लिए, एक नागरिक संहिता, आपराधिक संहिता या दंड संहिता में क्रमशः नागरिक मामलों, अपराधों और दंड से संबंधित कानूनों का एक सेट होता है। "कोड" निर्देशों के एक सेट को संदर्भित करता है, विभिन्न क्षेत्रों में, "कोड" प्रतीकों या संकेतों की एक प्रणाली को संदर्भित कर सकता है, जिसका उपयोग सूचना या संदेशों को इस तरह से प्रस्तुत करने के लिए किया जाता है, जो इसे समझने की कुंजी के बिना आसानी से समझ में नहीं आता है, मूल रूप से यह विनिर्धारणकारी विनियमों का एक संग्रह है। यह लिखित कानूनों का एक संग्रह है, जो आम तौर पर विशिष्ट विषय वस्तु या कानून के विभिन्न पहलुओं को आवरित करते हैं, जिसका मुख्य उद्देश्य कानूनी मामलों के लिए एक स्पष्ट और सुलभ ढांचा प्रदान करना है।[4] अधिक सामान्य अर्थ में, "कोड" नियमों या सिद्धांतों के एक समूह को भी संदर्भित कर सकता है, जो किसी विशेष समूह, संगठन या समुदाय के भीतर आचरण या व्यवहार का मार्गदर्शन करता है।

इस प्रकार समान सिविल संहिता का उद्देश्य नागरिक कानून से संबंधित एक एकरूप, सुसंगत, व्यवस्थित, विनियमों का कानूनी संग्रह तैयार करना है जो इसके दायरे में आने वाले सभी व्यक्तियों या संस्थाओं पर समान रूप से लागू हो तथा यह उन मामलों को संदर्भित करता है, जो व्यक्तियों या संस्थाओं के बीच निजी अधिकारों और संबंधों को नियंत्रित करते हैं। राज्य या राष्ट्रीय सीमाओं को पार करने वाले मुद्दों को संबोधित करने और कानूनी मामलों में सामंजस्य और दक्षता को बढ़ावा देने के लिए समान कानून अक्सर विकसित किए जाते हैं।

समान नागरिक संहिता की अवधारणा की वकालत अक्सर विविध समाजों में की जाती है जहां विभिन्न सांस्कृतिक, धार्मिक और जातीय पृष्ठभूमि के लोग सह-अस्तित्व में रहते हैं। भिन्नतामूलक पृष्ठभूमि के बावजूद भी इसका प्राथमिक उद्देश्य सभी नागरिकों के लिए समान व्यवहार और कानूनी सुरक्षा सुनिश्चित करना है। समान नागरिक संहिता बनाकर, राज्य का लक्ष्य सामाजिक एकता को बढ़ावा देना, भेदभाव को कम करना और कानून के तहत न्याय और समानता के सिद्धांतों को बनाए रखना है। ऐसे कई राष्ट्र हैं जिन्होंने समान नागरिक संहिता लागू की है या उनकी कानूनी प्रणाली में इसके कुछ पहलू हैं, जिसके द्वारा सभी नागरिकों के धर्म की परवाह किए बिना राष्ट्रों ने विवाह, तलाक, विरासत और गोद लेने जैसे व्यक्तिगत मामलों को नियंत्रित किया है। परन्तु सभी धर्मों, वर्गों के लिए वृहद् समान संहिता की वास्तविक आवश्यकता को लेकर समाजशास्त्री दीपांकर गुप्ता बहुत अधिक सहमत नहीं हैं, उनके अनुसार "इसकी प्रासंगिकता धीरे-धीरे ख़त्म हो गई है, जिससे बहुविवाह के अलार्म को पुनर्व्यवस्थित करने और वापस सोने की अनुमति मिल गई है। 1980 के दशक में शाहबानो मामले ने मुसलमानों के बीच बहुविवाह को एक राष्ट्रीय घोटाला बना दिया था; फिर भी इसने वास्तव में पूरे यूसीसी पैकेज को प्रभावित नहीं किया। हाल के वर्षों में बहुविवाह प्रथा, यूसीसी पर ढेरों न्यूज़फ़ीड के साथ वापस आ गई है, जिनमें से कुछ की कल्पना की गई थी, जो मुस्लिम समुदाय के पीछे एक बड़ा लक्ष्य चित्रित करती है। मीडिया चैट से देखने पर ऐसा लगता है कि मुसलमान स्वेच्छा से बहुविवाह करते हैं, जबकि सच्चाई यह है कि 1.9% से भी कम लोग ऐसा करते हैं। 1.3% हिंदुओं में भी बहुविवाह पूरी तरह से अनुपस्थित नहीं है। कोष्ठक में, बहुविवाह बड़े पैमाने पर गरीबों के बीच मौजूद है।"[5] वे मानते हैं कि अभी केवल बहुविवाह पर कानून बन जाये, इतना पर्याप्त होगा. इन्ही तथ्यों के प्रकाश में डॉ. फैजान मुस्तफा का पक्ष दृष्टव्य है कि, एक समान नागरिक संहिता में एक सामंजस्यपूर्ण कानूनी प्रणाली स्थापित करने, लैंगिक समानता को बढ़ावा देने और भारत में संवैधानिक मूल्यों को बनाए रखने की क्षमता होनी चाहिए।

इस तरह की चिंताओं के सन्दर्भ में ही प्रख्यात विधिशास्त्री डॉ आंबेडकर ने यूसीसी को महिलाओं और अल्पसंख्यकों सहित वंचित समूहों की रक्षा करने के प्रयास के रूप में ही कल्पित किया था, साथ ही उनकी मान्यता थी कि अधिनियमित होने पर कोड उन कानूनों को सुव्यवस्थित करने का प्रयास करेगा, जो वर्तमान में धार्मिक विचारों के आधार पर विभाजित हैं, जैसे कि हिंदू कोड बिल, शरीयत और अन्य तथा यह राष्ट्रीय उत्साह को भी बढ़ावा देगा। यह संहिता विवाह समारोहों, विरासत, उत्तराधिकार और गोद लेने से संबंधित जटिल कानूनों को सभी के लिए एक बना देगी। तब समान नागरिक कानून सभी नागरिकों पर लागू होगा, चाहे वे किसी भी धर्म, वर्ग, पंथ के हों। भारत के संविधान का अनुच्छेद 44 शादी, तलाक, भरण-

पोषण भत्ता, संरक्षण, दत्तक लेना, उत्तराधिकार सम्बन्धी विषयों पर हिंदू, मुस्लिम, पारसी और ईसाइयों के विविध धार्मिक कानूनों के स्थान पर एक रुप कानून का प्रावधान करता है, और यदि समान नागरिक संहिता अधिनियमित और लागू की जाती है, तो इससे समान हित, समान प्रक्रिया के कारण राज्य और परम्परा से जनित कृत्रिम भेदों का उन्मूलन होगा तथा राष्ट्रीय एकीकरण में मदद मिलेगी और तेजी भी आएगी। इससे पर्सनल लॉ के कारण मुकदमेबाजी भी कम हो जाएगी, वहीं विधिक अस्पष्टता, जटिलता से उद्जनित प्रकरणों का स्थान ठोस एकरूप नियम लेंगे, जिनको न्यायालय आवश्यकता पड़ने पर परिस्थिति अनुसार स्पष्ट निर्वचन कर अभिवृद्ध कर सकेगा।

परन्तु उक्त तर्कों के विपरीत जर्मन विधिशास्त्री टेंज्ञा हरक्लोत्ज्ञ मौजूदा धार्मिक व्यक्तिगत कानून प्रणाली को बदलने के लिए भारत के लिए समान नागरिक संहिता के प्रस्ताव को कभी न खत्म होने वाली बहस के रूप में देखती है। उनके अनुसार इसने राष्ट्रीय एकता, आधुनिकता, धर्मनिरपेक्षता और हाल ही में लैंगिक समानता पर चर्चा के लिए उत्प्रेरक के रूप में तो काम किया है, तथा असमानता के लिए यह एक रामबाण भी है और इसके समर्थकों के लिए आधुनिकता की कुंजी भी है, परन्तु उन लोगों के लिए यह एक खतरा है जिन्होंने व्यक्तिगत सुधार के अन्य तरीकों के लिए प्रयास करते हुए भी, एक वास्तविकता के रूप में इसे कानूनी शर्त के रूप में स्वीकार कर लिया है। टेंजा एक समान सिविल कोड लागू करने के विमर्श के समय इसकी अर्थपूर्णता पर ही सवाल उठाते हुए कहती हैं कि वैश्विक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय संगठन, गैर सरकारी संगठन और मानवाधिकार कार्यकर्ता सभी जब राज्य-केंद्रित कानूनी एकरूपता दृष्टिकोण से हटकर 'राज्य की पहुंच से परे मानक आदेशों को स्वीकार करने'[6] की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं, तब भारतीय संविधान का अनुच्छेद 44 क्रियान्वयन की प्रासंगिकता ही खो चुका है। इस अर्थहीनता की सिद्धी के लिए वह भारत में नारीवादी आंदोलन और भारतीय सुप्रीम कोर्ट के भीतर यूसीसी के निर्णयों का विश्लेषण करती हैं, तथा वह इस विमर्श को नारी अधिकार विमर्श के रूप में ही परिभाषित करती हैं। वह तर्क देती है कि अलग-अलग बयानबाजी के बावजूद, "दोनों (नारीवादी आंदोलन और भारतीय सुप्रीम कोर्ट) से सम्बंधित संस्थाओं ने वास्तविक तथ्य को भारत में कानूनी बहुलतावाद"[7] के रूप में स्वीकार कर लिया है।

महिला आंदोलन वर्तमान में, यूसीसी के लिए, अपने 1980 के प्रारंभिक आह्वान से दूर है और इस तरह की परियोजना की व्यवहार्यता पर खुले तौर पर सवाल उठाता है, वहीं सुप्रीम कोर्ट भी यूसीसी के लिए अपने न्यायिक आह्वान में केवल दिखावा करता है, जबकि इस प्रोजेक्ट को आगे बढ़ाने के लिए वह वास्तविक कार्रवाई का कोई प्रदर्शन नहीं करता है, यदि ऐसा होता तो वह व्यक्तिगत कानूनों को असंवैधानिक घोषित करने में अनिच्छुक न रहता और यह भी तर्क दिया जाता है कि न्यायपालिका ने निदेशक सिद्धांतों से जुड़े मामलों में साफ तौर पर प्रदर्शित होने लायक कोई सक्रियता नहीं दिखाई है। टेंज्ञा के मुताबिक, यदि वैश्विक स्तर पर देखा जाए तो अंतरराष्ट्रीय संगठन, गैर सरकारी संगठन और मानवाधिकार कार्यकर्ता अब यह मानने लग गए हैं कि राज्य केंद्रित कानूनी रूढ़िवादिता की बजाय लोगों ने मानकात्मक आदेशों को मानना शुरू कर दिया है, जो कि राज्य की पहुंच से परे होते हैं और यह प्रारूप में परिवर्तन खासकर विकासशील राष्ट्रों में जिनमें एशिया और अफ्रीका है, में देखा गया है। जहां 80% लोग इस तरह के अनौपचारिक और गैर राज्य विधिक व्यवस्थाओं में विश्वास करते हैं। टेंज्ञा हरक्लोज मानती है 'सर्वोच्च न्यायालय अलंकारिक रूप से यूसीसी की पक्ष की बात करता है',[8] निर्णयों की विविधता में सर्वोच्च न्यायालय अब विधायकों से कॉमन कोड प्रस्तावित करने के लिए इसलिए कहता है ताकि आधुनिकता और राष्ट्रीय एकता लाई जा सके, लेकिन इसमें अब लैंगिक संस्था का मुद्दा नहीं रहा है. उच्च एवं उच्चतम न्यायालय 1985 के बाद, जिसमें उसने यूसीसी के लिए चेताया था, अब पर्सनल लॉ को पुनः निर्वाचित करते समय प्रकरण की प्रकृति देखकर ही निर्णय कर रहा है.

भारत में अभी तक, 'जहाँ भी आवश्यकता है, वहां पर विभिन्न विधियों के पूर्व से ही विद्यमान होने तथा शेष में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के अस्तित्व में होने के कारण', यूसीसी को, भारतीय विधि आयोग 2018 द्वारा भी 'न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय' माना गया तथा इसे 'राष्ट्र की सद्भावना के लिये प्रतिकूल' भी कहा गया, प्रस्तुत प्रतिवेदन के अनुसार "जबकि भारतीय संस्कृति में विविधता हो सकती है और होनी भी चाहिए""[9], "जो इस स्तर पर न तो आवश्यक है और न ही वांछनीय है।""[10], आयोग के अनुसार "भिन्नता का अस्तित्व भेदभाव नहीं बल्कि एक मजबूत लोकतंत्र का संकेत है।"[11]

इससे पूर्व भी भारत में आवश्यकतानुसार विधि आयोग से विहित रीतियों, अस्पष्टताओं पर विधि निर्माण हेतु प्रतिवेदन मांगे जाते रहे, तदनुसार विधि निर्माण एवं सहिंताकरण के विछिन्न प्रयास जारी रहे, ऐसे ही प्रयासों में 'भारत में ईसाइयों के बीच विवाह और तलाक से संबंधित कानून', 1960, 'धर्मान्तरित विवाह विघटन अधिनियम', 1961; ईसाई विवाह और वैवाहिक कारण विधेयक, 1961; विदेशी विवाह का कानून, 1962; हिंदू विवाह अधिनियम, 1955, अंतरिम भरण-पोषण के आदेश और वैवाहिक कार्यवाही में बच्चों के भरण-पोषण के आदेश, 1984; 'अवयस्क' के भरणपोषण के पैसे से उत्पन्न आय में छूट की संभावनाएँ, 2017; दहेज मृत्यु और विधि सुधारः हिंदू विवाह अधिनियम, 1955; बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 आदि।

उपरोक्त प्रतिवेदनों की कार्यवाही को सारभूत रूप में समझा जाये तो भारतीय लोकतंत्र ने नागरिक समाज की आवश्यकतानुसार विधि निर्माण किया है, वहां विधिक शून्यवाद की स्थिति नहीं है तथा भारत सरकार के प्रेस इनफार्मेशन ब्यूरो के अनुसार 2001 तक "भारत के विधि आयोग ने अब तक 175 रिपोर्टें सरकार को भेजी हैं। इनमें से एक रिपोर्ट को छोड़कर सभी रिपोर्ट संसद में रखी जा चुकी हैं। अब तक नब्बे रिपोर्टें लागू की जा चुकी हैं और 33 रिपोर्टें स्वीकार नहीं की गईं।"[12] जिससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि विषय पर विमर्श हेतु विधि आयोग का प्रतिवेदन मायने रखता है तथा यह अनिवार्य नही है कि प्रत्येक विमर्श सदैव विधि निर्माण का मार्ग प्रशस्त करे। एक अन्य स्रोत के अनुसार ''20 विधि आयोगों के 262 प्रतिवेदनों में से 92 लागू हो चुके, 101"[13] प्रतिवेदन सरकार के विचाराधीन और क्रियान्वयनाधीन हैं। समान नागरिक संहिता हेतु 2020 में गठित 22वें विधि आयोग समयावृद्धि पश्चात अगस्त 2024 तक कार्यरत रहेगा, तब तक उक्त विमर्श को संहिताबद्ध किये जाने के लिए प्रतीक्षा करनी होगी। परन्तु यह गैर विवादास्पद है कि एक समान सिविल कोड महिला समानता से संबंधित भेदभाव को समाप्त कर सकता है और भारत में महिलाओं को समान अधिकार और अवसर प्रदान कर सकता है।

निष्कर्ष

भारत में सामान्य सिविल कोड के कार्यान्वयन से सामाजिक समन्वय को प्रोत्साहित किया जा सकता है, राष्ट्रीय एकीकरण को मजबूत बनाया जा सकता है और कानूनी मामलों में धार्मिक विचारों के प्रभाव को कम कर भारतीय समाज को अधिक आधुनिक, तार्किक बनाया जा सकता है। इसके क्रियान्वयन हेतु देश में प्रचलित विभिन्न पर्सनल लॉज़ और प्रथाओं का मसौदा तैयार करने, उन्हें संहिताबद्ध करने, उनके बीच सामंजस्य लाने और उन्हें तर्कसंगत बनाने की आवश्यकता होगी। इसके लिये धार्मिक नेताओं, कानूनी विशेषज्ञों, महिला संगठनों आदि सहित विभिन्न हितधारकों के व्यापक परामर्श और भागीदारी की आवश्यकता होगी। समान नागरिक संहिता विभिन्न पर्सनल लॉज़ के अंतर्गत महिलाओं के साथ होने वाले भेदभाव और उत्पीड़न को दूर करके लैंगिक न्याय एवं समानता सुनिश्चित करेगी। यह विवाह, तलाक़, उत्तराधिकार, गोद लेने, भरण-पोषण आदि मामलों में महिलाओं को समान अधिकार और दर्जा प्रदान करेगी। यह महिलाओं को उन पितृसत्तात्मक और प्रतिगामी प्रथाओं को चुनौती देने के लिये भी सशक्त बनाएगी जो उनके मूल अधिकारों का उल्लंघन करते हैं।

समान नागरिक संहिता विभिन्न पर्सनल लॉज़ की जटिलताओं और विरोधाभासों को दूर करके कानूनी प्रणाली को सरल और युक्तिसंगत बनाएगी। प्रस्तावित समान नागरिक संहिता को भारत के बहुसंस्कृतिवाद को प्रतिबिंबित करने और इसकी विविधता को संरक्षित करने में सक्षम होना चाहिये। राष्ट्र की एकता, एकरूपता से ही संभव है, से उठकर एकता को सशक्त ताने बाने में बुनने के लिए अधिक समावेशी, न्यायपूर्ण तथा सामाजिक स्वीकार्यता वाली समान संहिता राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण है। भारतीय संविधान सांस्कृतिक मतभेदों को समायोजित करने के लिये एकीकरणवादी और नियंत्रित, दोनों तरह के बहुसांस्कृतिक दृष्टिकोणों की अनुमति देता है। यह कुछ पर्सनल लॉज़ में प्रचलित पुरानी एवं प्रतिगामी प्रथाओं का आधुनिकीकरण और इसमें सुधार करे, सभी नागरिकों के बीच एक समान पहचान और अपनेपन की भावना पैदा करके राष्ट्रीय एकता एवं धर्मनिरपेक्षता को बढ़ावा दे ताकि विभिन्न पर्सनल लॉज़ के कारण उत्पन्न होने वाले सांप्रदायिक और पंथ-संबंधी विवादों में भी कमी आए। सभी के लिये समानता, बंधुता और गरिमा के संवैधानिक मूल्यों को भी संपुष्ट कर उन प्रथाओं को समाप्त करे जो भारत के संविधान में निहित मानव अधिकारों और मूल्यों के विरुद्ध हैं, जैसे तीन तलाक़, बहुविवाह, बाल विवाह, आदि। बदलती सामाजिक वास्तविकताओं और लोगों की आकांक्षाओं को भी समायोजित कर, एक समायोजित

सिविल विधिक नियमावली का संहिताकरण महिला समानता, सामाजिक समन्वय, और राष्ट्रीय एकीकरण को पुष्ट कर सकता है, हालांकि, भारत को धार्मिक और सांस्कृतिक संवेदनशीलता की चुनौतियों से निपटना होगा, ताकि एकीकरण के साथ साथ धार्मिक स्वतंत्रता और संस्कृति संबंधी विविधताओं का समर्थन भी किया जा सके।

सन्दर्भ सूची

1. एचटीटीपीएसः//डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.ओईडी.कॉम/सर्च/डिक्शनरी/यूनिफार्म
2. उपर्युक्त
3. एचटीटीपीएसः//डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.ओईडी.कॉम/सर्च/डिक्शनरी/कोड सिविल
4. एचटीटीपीएसः//डिक्शनरी.लॉ.कॉम
5. एचटीटीपीएसः//टाइम्स ऑफ इण्डिया.इण्डियाटाइम्स.कॉम/इण्डिया/फर्स्ट-मेक-ऑल-पॉलीगैमी इललीगल/आर्टिकल शो/101804314 डॉट सीएमएस
6. हरक्लोट्ज़, टेंजा, डेड लेटर्स ? द यूनिफार्म सिविल कोड थ्रू द आइज ऑफ़ द इंडियन विमेंस मूवमेंट एन्ड द इंडियन सुप्रीम कोर्ट, वर्फ़ासुंग अंड रेख्त इन उबेरसी / लॉ एंड पॉलिटिक्स इन अफ्रीका, एशिया एंड लैटिन अमेरिका, वॉल्यूम- 49, संख्या 2, विशेष अंकः मौलिक अधिकार और निदेशक सिद्धांतः (यूएन) ने भारतीय संविधान के वादे पूरे किए (2016), पृष्ठ 148-174।
7. उपर्युक्त
8. उपर्युक्त
9. पारिवारिक कानून में सुधार पर परामर्श पत्र, भारतीय विधि आयोग, 31 अगस्त 2018, पैरा 1.15, पेज -7
10. उपर्युक्त
11. उपर्युक्त
12. एचटीटीपीएसः//आर्काइवण्पीआईबी.जीओवी.इन/डॉक्यूमेन्ट्स/आरलिंक/2018/ऑग/पी201883101.पीडीएफ
13. एचटीटीपीएसः//लीगलअफेयर्स.जीओवी.इन